

भारत में दलित समाज के सामाजिक-आर्थिक सशक्तीकरण में भारत सरकार की भूमिका: एक समकालीन अध्ययन

कामिनी वर्मा ¹, सौरभ ²

¹ प्रोफेसर, राजकीय महिला महाविद्यालय शेखसराय सीतापुर, लखनऊ विश्वविद्यालय, उत्तर प्रदेश, भारत

² इतिहास विभाग काशी नरेश स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ज्ञानपुर, भदोही, महात्मा गाँधी काशी विद्यापीठ वाराणसी, उत्तर प्रदेश, भारत

सारांश

भारतीय समाज की सामाजिक संरचना ऐतिहासिक रूप से जाति-आधारित व्यवस्था से प्रभावित रही है। इस व्यवस्था के परिणामस्वरूप समाज के कुछ समुदायों को सामाजिक बहिष्कार, अस्पृश्यता, शैक्षिक वंचना, आर्थिक निर्भरता तथा राजनीतिक उपेक्षा जैसी गंभीर समस्याओं का सामना करना पड़ा। आधुनिक सामाजिक विमर्श में ऐसे ऐतिहासिक रूप से वंचित एवं उत्पीड़ित समुदायों को सामान्यतः "दलित" कहा जाता है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भारतीय संविधान ने समानता, सामाजिक न्याय, स्वतंत्रता तथा मानवीय गरिमा को लोकतांत्रिक व्यवस्था के मूल सिद्धांतों के रूप में स्वीकार करते हुए अनुसूचित जातियों के संरक्षण और विकास के लिए विशेष संवैधानिक प्रावधान किए। प्रस्तुत शोध-पत्र में दलित समाज की वर्तमान सामाजिक, शैक्षिक, आर्थिक एवं राजनीतिक स्थिति का विश्लेषण करते हुए उसके सामाजिक-आर्थिक सशक्तीकरण में भारत सरकार की भूमिका का मूल्यांकन किया गया है।

अध्ययन से स्पष्ट होता है कि संवैधानिक संरक्षण, आरक्षण व्यवस्था, शैक्षिक छात्रवृत्तियों, राजनीतिक प्रतिनिधित्व, आर्थिक सहायता, कौशल विकास, उद्यमिता कार्यक्रमों तथा विशेष कल्याणकारी योजनाओं ने दलित समुदाय की भागीदारी और अवसरों का विस्तार किया है। विभिन्न केंद्र सरकारों ने अपने-अपने कार्यकाल में सामाजिक न्याय की नीतियों को संस्थागत एवं योजनागत रूप से आगे बढ़ाया है। इसके बावजूद जातिगत भेदभाव, भूमिहीनता, आर्थिक असमानता, गुणवत्तापूर्ण शिक्षा तक सीमित पहुँच, अस्थिर रोजगार तथा जाति-आधारित अत्याचार जैसी चुनौतियाँ अभी भी विद्यमान हैं। अध्ययन का निष्कर्ष है कि दलित समाज के विकास में सरकारी नीतियों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है, किंतु सामाजिक न्याय की वास्तविक स्थापना के लिए योजनाओं के प्रभावी क्रियान्वयन, गुणवत्तापूर्ण शिक्षा, आर्थिक स्वावलंबन तथा सामाजिक चेतना में व्यापक परिवर्तन आवश्यक है।

मूलशब्द: दलित समाज, सामाजिक न्याय, अनुसूचित जाति, संवैधानिक संरक्षण, आरक्षण, सामाजिक-आर्थिक सशक्तीकरण

भारत विश्व की प्राचीन सभ्यताओं में से एक है, जिसकी सामाजिक संरचना भाषा, धर्म, संस्कृति, क्षेत्र तथा जाति जैसी विविधताओं से निर्मित हुई है। भारतीय समाज में जाति-व्यवस्था ने ऐतिहासिक रूप से सामाजिक संगठन की एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई, किंतु समय के साथ यह सामाजिक पदानुक्रम, असमानता तथा भेदभाव का आधार भी बन गई। इसके परिणामस्वरूप कुछ समुदायों को सामाजिक सम्मान, शिक्षा, संपत्ति, सार्वजनिक संसाधनों तथा समान अवसरों से वंचित रहना पड़ा। आधुनिक सामाजिक एवं राजनीतिक विमर्श में ऐतिहासिक रूप से वंचित और उत्पीड़ित समुदायों के लिए "दलित" शब्द का प्रयोग किया जाता है।

"दलित" शब्द केवल सामाजिक पीड़ा और उत्पीड़न का सूचक नहीं है, बल्कि समानता, आत्मसम्मान, अधिकार तथा सामाजिक न्याय के संघर्ष का भी प्रतिनिधित्व करता है। दलित समुदाय ने लंबे समय तक अस्पृश्यता, सामाजिक बहिष्कार, आर्थिक शोषण तथा शैक्षिक वंचना जैसी समस्याओं का सामना किया। उन्नीसवीं और बीसवीं शताब्दी में ज्योतिराव फुले, सावित्रीबाई फुले, नारायण गुरु, महात्मा गांधी तथा डॉ. भीमराव रामजी आंबेडकर जैसे सामाजिक सुधारकों ने जातिगत भेदभाव और सामाजिक असमानता के विरुद्ध महत्वपूर्ण योगदान दिया। डॉ. आंबेडकर ने शिक्षा, संगठन, राजनीतिक प्रतिनिधित्व तथा संवैधानिक अधिकारों को दलित समाज के उत्थान का प्रमुख आधार माना।¹

स्वतंत्रता के पश्चात् भारतीय संविधान ने सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक न्याय को राष्ट्र-निर्माण का आधार बनाया। संविधान के अनुच्छेद 14, 15, 16, 17 तथा 46 के माध्यम से समानता, भेदभाव-निषेध, अस्पृश्यता के उन्मूलन तथा अनुसूचित जातियों के शैक्षिक एवं आर्थिक हितों के संरक्षण की व्यवस्था की गई।² इसके आधार पर भारत सरकार ने आरक्षण, छात्रवृत्ति, राजनीतिक

प्रतिनिधित्व, आर्थिक सहायता तथा सामाजिक सुरक्षा से संबंधित अनेक नीतियाँ और योजनाएँ लागू कीं।

वर्तमान समय में दलित समाज की स्थिति में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुआ है। दलित समुदाय के लोग शिक्षा, प्रशासन, राजनीति, न्यायपालिका, साहित्य, विज्ञान, मीडिया तथा उद्यमिता सहित अनेक क्षेत्रों में सक्रिय भूमिका निभा रहे हैं। फिर भी जातिगत पूर्वाग्रह, आर्थिक विषमता, भूमिहीनता, गुणवत्तापूर्ण शिक्षा तक असमान पहुँच तथा जाति-आधारित अत्याचार जैसी चुनौतियाँ बनी हुई हैं। अतः दलित समाज की वर्तमान स्थिति तथा उसके सामाजिक-आर्थिक सशक्तीकरण में भारत सरकार की भूमिका का अध्ययन समकालीन भारत के सामाजिक न्याय विमर्श में अत्यंत प्रासंगिक है।

दलित समाज की अवधारणा एवं ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

"दलित" शब्द सामान्यतः उन समुदायों की ऐतिहासिक स्थिति को व्यक्त करता है, जिन्हें जाति-आधारित सामाजिक व्यवस्था में लंबे समय तक भेदभाव, बहिष्कार और वंचना का सामना करना पड़ा। सामान्य अर्थ में इसका आशय दबाए गए, उत्पीड़ित अथवा सामाजिक रूप से वंचित समुदायों से है। आधुनिक संदर्भ में दलित पहचान सामाजिक अधिकार, आत्मसम्मान तथा समान अवसर की चेतना से भी जुड़ी है। यद्यपि "दलित" और "अनुसूचित जाति" पूर्णतः समानार्थी शब्द नहीं हैं, फिर भी सरकारी नीतियों एवं सामाजिक न्याय के संदर्भ में दोनों के बीच निकट संबंध है।

दलित समाज की समस्याओं को केवल आर्थिक निर्धनता के आधार पर नहीं समझा जा सकता। सामाजिक भेदभाव, सांस्कृतिक बहिष्कार, शैक्षिक वंचना, आर्थिक निर्भरता तथा राजनीतिक उपेक्षा ने दलित समुदाय की स्थिति को बहुआयामी रूप से प्रभावित किया। ऐतिहासिक रूप से अनेक समुदायों को सीमित

और सामाजिक दृष्टि से निम्न माने जाने वाले व्यवसायों तक बाँध दिया गया। भूमि, संपत्ति, शिक्षा तथा अन्य उत्पादक संसाधनों तक असमान पहुँच के कारण उनकी सामाजिक एवं आर्थिक गतिशीलता बाधित हुई।³

ज्योतिराव फुले ने जाति-आधारित शोषण और सामाजिक असमानता की आलोचना करते हुए शिक्षा को वंचित समुदायों की मुक्ति का महत्वपूर्ण साधन माना।⁴ डॉ. आंबेडकर ने दलित प्रश्न को केवल सामाजिक सुधार तक सीमित न रखकर राजनीतिक प्रतिनिधित्व, आर्थिक अवसर तथा संवैधानिक अधिकारों से जोड़ा। उनके अनुसार सामाजिक समानता के अभाव में राजनीतिक लोकतंत्र पूर्णतः सार्थक नहीं हो सकता।⁵ स्वतंत्रता के बाद संवैधानिक प्रावधानों ने दलित समाज के विकास को संस्थागत आधार प्रदान किया तथा राज्य को ऐतिहासिक असमानताओं को कम करने के लिए विशेष उपाय अपनाने का दायित्व सौंपा।

भारत में दलित समाज की वर्तमान स्थिति

1. सामाजिक एवं शैक्षिक स्थिति

स्वतंत्रता के बाद दलित समाज की सामाजिक स्थिति में उल्लेखनीय परिवर्तन हुआ है। संवैधानिक संरक्षण, शिक्षा के प्रसार, शहरीकरण, लोकतांत्रिक राजनीति तथा सामाजिक आंदोलनों ने दलित समुदाय की सार्वजनिक भागीदारी को बढ़ाया है। वर्तमान में दलित समुदाय के लोग प्रशासन, राजनीति, शिक्षा, न्यायपालिका, साहित्य, विज्ञान, मीडिया, उद्योग तथा उद्यमिता सहित विभिन्न क्षेत्रों में सक्रिय हैं। दलित साहित्य ने भी वंचित समुदायों के अनुभवों और संघर्षों को सामाजिक विमर्श का विषय बनाकर समानता एवं आत्मसम्मान की चेतना को मजबूत किया है।⁶

इसके बावजूद सामाजिक भेदभाव पूर्णतः समाप्त नहीं हुआ है। कुछ ग्रामीण क्षेत्रों में जातिगत पहचान सामाजिक संबंधों, विवाह, सार्वजनिक संसाधनों तक पहुँच तथा स्थानीय सत्ता-संरचना को प्रभावित करती है। प्रत्यक्ष अस्पृश्यता के अनेक रूपों में कमी आई है, किंतु सामाजिक दूरी, जातिगत पूर्वाग्रह तथा अप्रत्यक्ष भेदभाव की समस्याएँ अभी भी दिखाई देती हैं। समकालीन भारत में जाति का स्वरूप परिवर्तित हुआ है, परंतु उसका सामाजिक और आर्थिक प्रभाव पूरी तरह समाप्त नहीं हुआ है।⁷

शिक्षा दलित समाज के सशक्तीकरण का प्रमुख आधार है। भारत सरकार ने विद्यालयी शिक्षा से लेकर उच्च शिक्षा और शोध स्तर तक छात्रवृत्ति, आरक्षण, छात्रावास, विशेष कोचिंग तथा वित्तीय सहायता से संबंधित कार्यक्रम संचालित किए हैं। प्री-मैट्रिक और पोस्ट-मैट्रिक छात्रवृत्ति योजनाओं का उद्देश्य आर्थिक कठिनाइयों के कारण शिक्षा से वंचित होने अथवा पढ़ाई बीच में छोड़ने की समस्या को कम करना है। उच्च शिक्षा के क्षेत्र में राष्ट्रीय फेलोशिप, उच्च श्रेणी शिक्षा तथा राष्ट्रीय विदेश छात्रवृत्ति जैसी व्यवस्थाएँ अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों को आगे बढ़ने के अवसर प्रदान करती हैं।⁸

इन उपायों के परिणामस्वरूप उच्च शिक्षा, तकनीकी शिक्षा, चिकित्सा, विधि तथा शोध के क्षेत्रों में दलित विद्यार्थियों की भागीदारी बढ़ी है। फिर भी गुणवत्तापूर्ण विद्यालयों तक सीमित पहुँच, आर्थिक कठिनाइयाँ, डिजिटल संसाधनों की कमी तथा छात्रवृत्ति वितरण में विलंब जैसी चुनौतियाँ बनी हुई हैं। इसलिए केवल नामांकन में वृद्धि पर्याप्त नहीं है; शिक्षा की गुणवत्ता, शैक्षिक निरंतरता और समान अवसरों को सुनिश्चित करना भी आवश्यक है।

2. आर्थिक एवं राजनीतिक स्थिति

दलित समाज की आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ है, किंतु आर्थिक असमानता अभी भी एक गंभीर चुनौती है। ऐतिहासिक रूप से अनेक दलित समुदाय भूमिहीन कृषि श्रमिकों, असंगठित क्षेत्र के

कामगारों तथा कम आय वाले व्यवसायों से जुड़े रहे हैं। भूमि, पूंजी, तकनीक और बाजार तक सीमित पहुँच ने उनकी आर्थिक प्रगति को प्रभावित किया। आधुनिक भारत में एक शिक्षित एवं पेशेवर दलित वर्ग का विकास हुआ है, किंतु बड़ी आबादी अभी भी अस्थिर रोजगार और आर्थिक असुरक्षा का सामना करती है। जाति-आधारित आर्थिक भेदभाव और अवसरों की असमानता समकालीन समाज में भी महत्वपूर्ण विषय बने हुए हैं।⁹

भारत सरकार ने आर्थिक सशक्तीकरण के लिए ऋण, स्वरोजगार, कौशल विकास तथा उद्यमिता से संबंधित कार्यक्रम संचालित किए हैं। राष्ट्रीय अनुसूचित जाति वित्त एवं विकास निगम के माध्यम से अनुसूचित जाति समुदाय के लोगों को आर्थिक गतिविधियों तथा स्वरोजगार के लिए सहायता उपलब्ध कराई जाती है। आर्थिक सशक्तीकरण को केवल ऋण अथवा अनुदान तक सीमित नहीं रखा जा सकता; इसके लिए आधुनिक कौशल, तकनीकी सहायता, बाजार तक पहुँच तथा उद्यमिता प्रशिक्षण की भी आवश्यकता है।

राजनीतिक प्रतिनिधित्व स्वतंत्र भारत में दलित सशक्तीकरण की एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है। संविधान के अनुच्छेद 330 और 332 के अंतर्गत लोकसभा तथा राज्य विधानसभाओं में अनुसूचित जातियों के लिए सीटों के आरक्षण की व्यवस्था की गई है। स्थानीय स्वशासन संस्थाओं में आरक्षण ने भी दलित नेतृत्व और राजनीतिक भागीदारी को बढ़ावा दिया है। राजनीतिक प्रतिनिधित्व ने दलित समुदाय को लोकतांत्रिक संस्थाओं में अपनी समस्याएँ और हित व्यक्त करने का अवसर दिया है। फिर भी प्रतिनिधित्व और वास्तविक निर्णय-निर्माण की क्षमता के बीच कुछ क्षेत्रों में अंतर दिखाई देता है। इसलिए राजनीतिक आरक्षण के साथ नेतृत्व विकास, प्रशासनिक प्रशिक्षण और सामाजिक जागरूकता को भी महत्व दिया जाना चाहिए।

दलित महिलाओं की स्थिति विशेष ध्यान की अपेक्षा करती है, क्योंकि उन्हें जाति और लिंग से संबंधित असमानताओं का एक साथ सामना करना पड़ सकता है। शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार, सामाजिक सुरक्षा तथा हिंसा से संरक्षण के क्षेत्रों में उनकी चुनौतियाँ अपेक्षाकृत जटिल हैं। अतः दलित महिलाओं के लिए लक्षित शिक्षा, कौशल विकास, स्वरोजगार तथा सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रमों का विस्तार आवश्यक है।

दलित समाज के सशक्तीकरण में विभिन्न केंद्र सरकारों की भूमिका

दलित समाज के संरक्षण और सशक्तीकरण की प्रक्रिया किसी एक सरकार अथवा एक निश्चित कालखंड तक सीमित नहीं रही है। विभिन्न केंद्र सरकारों ने संवैधानिक संरक्षण, कानूनी उपायों, राजनीतिक प्रतिनिधित्व, शिक्षा तथा सामाजिक-आर्थिक विकास कार्यक्रमों के माध्यम से इस प्रक्रिया को क्रमिक रूप से आगे बढ़ाया है।

स्वतंत्रता के प्रारंभिक वर्षों में पंडित जवाहरलाल नेहरू के नेतृत्व में संविधान के सामाजिक न्याय संबंधी प्रावधानों को संस्थागत आधार मिला। इसी अवधि में अनुसूचित जातियों के लिए आरक्षण व्यवस्था तथा कल्याण संबंधी प्रशासनिक ढाँचे का विकास हुआ। इंदिरा गांधी के कार्यकाल में अनुसूचित जातियों के विकास के लिए विशेष योजनागत प्रावधानों और लक्षित विकास व्यय की अवधारणा को अधिक महत्व मिला। इस अवधि में सामाजिक न्याय को विकास-नीति के एक महत्वपूर्ण आयाम के रूप में स्थापित करने का प्रयास किया गया।

पी. वी. नरसिंहा राव सरकार के कार्यकाल में 73वें और 74वें संविधान संशोधनों के माध्यम से पंचायती राज संस्थाओं और शहरी स्थानीय निकायों को संवैधानिक आधार प्राप्त हुआ। इससे स्थानीय स्तर पर अनुसूचित जातियों के राजनीतिक प्रतिनिधित्व को अधिक संस्थागत स्वरूप मिला। इसके बाद की सरकारों ने

छात्रवृत्ति, उच्च शिक्षा, आर्थिक सहायता, सामाजिक सुरक्षा तथा कौशल विकास से संबंधित कार्यक्रमों का विस्तार किया। अटल बिहारी वाजपेयी के नेतृत्व वाली सरकार के दौरान सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता से संबंधित संस्थागत व्यवस्थाओं तथा अनुसूचित जाति कल्याण कार्यक्रमों को आगे बढ़ाया गया। डॉ. मनमोहन सिंह के नेतृत्व वाली सरकार के दौरान अनुसूचित जातियों के शैक्षिक एवं सामाजिक-आर्थिक विकास, छात्रवृत्ति तथा लक्षित विकास-व्यय से संबंधित कार्यक्रमों का विस्तार हुआ। इस अवधि में समावेशी विकास को योजनागत नीति के एक महत्वपूर्ण उद्देश्य के रूप में प्रस्तुत किया गया। वर्तमान में नरेंद्र मोदी के नेतृत्व वाली केंद्र सरकार ने अनुसूचित जातियों के सामाजिक-आर्थिक सशक्तीकरण के लिए प्रधानमंत्री अनुसूचित जाति अभ्युदय योजना, अर्थात् पीएम-अजय, के माध्यम से कौशल विकास, आय-सृजन, आजीविका तथा अनुसूचित जाति बहुल क्षेत्रों के विकास पर बल दिया है। इस योजना का उद्देश्य गरीबी में कमी, रोजगार के अवसरों का विस्तार तथा सामाजिक-आर्थिक आधारभूत सुविधाओं का विकास करना है। इस प्रकार दलित समाज के विकास में सरकारी भूमिका को एक दीर्घकालीन और क्रमिक प्रक्रिया के रूप में देखा जाना चाहिए। विभिन्न सरकारों ने अपने-अपने कार्यकाल में संवैधानिक संरक्षण, राजनीतिक प्रतिनिधित्व, शिक्षा, आर्थिक विकास तथा सामाजिक सुरक्षा के विभिन्न आयामों को आगे बढ़ाया है। इसलिए सरकारी भूमिका का मूल्यांकन किसी एक सरकार की उपलब्धियों तक सीमित न होकर दीर्घकालीन सामाजिक परिवर्तन के आधार पर किया जाना चाहिए।

संवैधानिक एवं कानूनी संरक्षण

भारत सरकार की दलित कल्याण नीति का मूल आधार भारतीय संविधान है। संविधान का अनुच्छेद 14 विधि के समक्ष समानता तथा विधियों के समान संरक्षण का प्रावधान करता है। अनुच्छेद 15 जाति सहित विभिन्न आधारों पर भेदभाव का निषेध करता है तथा अनुच्छेद 15(4) राज्य को अनुसूचित जातियों के हित में विशेष प्रावधान करने की अनुमति देता है। अनुच्छेद 16 सार्वजनिक रोजगार में समान अवसर प्रदान करता है तथा अनुच्छेद 16(4) पर्याप्त प्रतिनिधित्व से वंचित वर्गों के लिए विशेष व्यवस्था का संवैधानिक आधार प्रदान करता है। अनुच्छेद 17 अस्पृश्यता का उन्मूलन करता है और अनुच्छेद 46 राज्य को अनुसूचित जातियों के शैक्षिक एवं आर्थिक हितों को प्रोत्साहित करने तथा उन्हें सामाजिक अन्याय और शोषण से संरक्षण देने का निर्देश देता है।¹³

आरक्षण व्यवस्था सामाजिक न्याय का एक महत्वपूर्ण संवैधानिक साधन है। इसका उद्देश्य केवल शिक्षा और सरकारी सेवाओं में अवसर उपलब्ध कराना नहीं, बल्कि ऐतिहासिक रूप से वंचित समुदायों की संस्थागत भागीदारी तथा सामाजिक प्रतिनिधित्व को बढ़ाना भी है। आरक्षण ने दलित समाज में शिक्षित एवं पेशेवर वर्ग के विकास में योगदान दिया है।¹⁴

दलित समुदाय के अधिकारों की रक्षा के लिए नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम, 1955 तथा अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 लागू किए गए। इन कानूनों का उद्देश्य जाति-आधारित भेदभाव और अत्याचारों को रोकना तथा पीड़ितों को कानूनी संरक्षण, राहत एवं पुनर्वास उपलब्ध कराना है।¹⁵ संविधान के अनुच्छेद 338 के अंतर्गत राष्ट्रीय अनुसूचित जाति आयोग संवैधानिक एवं कानूनी सुरक्षा उपायों की निगरानी करता है तथा अनुसूचित जातियों के अधिकारों से संबंधित शिकायतों की जाँच करता है।¹⁶

भारत सरकार की भूमिका का मूल्यांकन एवं प्रमुख चुनौतियाँ

भारत सरकार की नीतियों और कार्यक्रमों ने दलित समाज की स्थिति में महत्वपूर्ण परिवर्तन किया है। शिक्षा और सरकारी सेवाओं में अवसरों का विस्तार हुआ है, राजनीतिक प्रतिनिधित्व बढ़ा है तथा सामाजिक अत्याचारों के विरुद्ध कानूनी संरक्षण उपलब्ध हुआ है। छात्रवृत्ति, आर्थिक सहायता, कौशल विकास और उद्यमिता संबंधी कार्यक्रमों ने रोजगार तथा स्वरोजगार के अवसरों को बढ़ाने में योगदान दिया है।

इसके बावजूद जातिगत पूर्वाग्रह, भूमिहीनता, गरीबी, असंगठित रोजगार, गुणवत्तापूर्ण शिक्षा तक सीमित पहुँच, बेरोजगारी, डिजिटल असमानता तथा जाति-आधारित हिंसा जैसी समस्याएँ बनी हुई हैं। योजनाओं की जानकारी का अभाव, लाभार्थियों की पहचान में कमियाँ, छात्रवृत्ति एवं आर्थिक सहायता के वितरण में विलंब तथा राज्यों के बीच क्रियान्वयन का अंतर भी नीति-प्रभावशीलता को प्रभावित करता है। सामाजिक बहिष्कार और आर्थिक भेदभाव का संबंध केवल व्यक्तिगत व्यवहार से नहीं, बल्कि संसाधनों और अवसरों तक असमान पहुँच से भी है।¹⁷

इन चुनौतियों के समाधान के लिए गुणवत्तापूर्ण शिक्षा, डिजिटल एवं तकनीकी कौशल, समयबद्ध छात्रवृत्ति, रोजगारोन्मुख प्रशिक्षण तथा उद्यमिता को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। दलित उद्यमियों को केवल ऋण ही नहीं, बल्कि बाजार, तकनीकी सहायता और व्यावसायिक मार्गदर्शन भी उपलब्ध कराया जाना चाहिए। अत्याचार निवारण कानून के प्रभावी क्रियान्वयन के लिए पुलिस एवं प्रशासन को संवेदनशील बनाना तथा जाँच और न्यायिक प्रक्रिया को अधिक उत्तरदायी बनाना आवश्यक है। दलित महिलाओं तथा अत्यंत वंचित समुदायों के लिए लक्षित योजनाओं को भी अधिक प्रभावी बनाया जाना चाहिए।

निष्कर्ष

भारत में दलित समाज की वर्तमान स्थिति परिवर्तन और निरंतर चुनौतियों का मिश्रित स्वरूप प्रस्तुत करती है। स्वतंत्रता के बाद संवैधानिक प्रावधानों, आरक्षण नीति, शैक्षिक सहायता, राजनीतिक प्रतिनिधित्व, आर्थिक कार्यक्रमों तथा कानूनी संरक्षण के माध्यम से दलित समाज की सामाजिक-आर्थिक स्थिति में उल्लेखनीय सुधार हुआ है। दलित समुदाय के लोगों ने शिक्षा, प्रशासन, राजनीति, साहित्य, विज्ञान, न्याय तथा उद्यमिता के क्षेत्रों में महत्वपूर्ण उपलब्धियाँ प्राप्त की हैं।

भारत सरकार ने दलित समाज के विकास में बहुआयामी भूमिका निभाई है। विभिन्न केंद्र सरकारों ने अपने-अपने कार्यकाल में संवैधानिक संरक्षण, राजनीतिक प्रतिनिधित्व, शिक्षा, आर्थिक विकास तथा कानूनी सुरक्षा से संबंधित नीतियों को आगे बढ़ाया है। इसके बावजूद सामाजिक भेदभाव, आर्थिक विषमता, भूमिहीनता, शैक्षिक असमानता तथा जाति-आधारित अत्याचार जैसी समस्याएँ अभी भी विद्यमान हैं।

अतः केवल योजनाओं का निर्माण पर्याप्त नहीं है; उनका प्रभावी, पारदर्शी और उत्तरदायी क्रियान्वयन भी आवश्यक है। दलित समाज का वास्तविक सशक्तीकरण तभी संभव होगा, जब सामाजिक सम्मान, गुणवत्तापूर्ण शिक्षा, आर्थिक अवसर, राजनीतिक भागीदारी तथा न्याय तक समान पहुँच सुनिश्चित की जाए। इस दिशा में सरकार के साथ-साथ शैक्षिक संस्थानों, नागरिक समाज, मीडिया तथा व्यापक समाज की सक्रिय भागीदारी भी आवश्यक है। दलित समाज का सशक्तीकरण केवल किसी एक समुदाय का विकास नहीं, बल्कि सामाजिक न्याय, लोकतांत्रिक समानता तथा समावेशी राष्ट्र-निर्माण की अनिवार्य प्रक्रिया है।

संदर्भ सूची

1. Ambedkar BR. Annihilation of caste. Jalandhar: Bheem Patrika Publications; 1936.
2. भारत सरकार। भारत का संविधान। प्रस्तावना तथा अनुच्छेद 14, 15, 16, 17 एवं 46।
3. Ambedkar BR. The untouchables: who were they and why they became untouchables? Bombay: Amrit Book Co.; 1948.
4. Phule J. Gulamgiri. Pune; 1873.
5. Ambedkar BR. Annihilation of caste.; 1936.
6. Guru G, Sarukkai S. The cracked mirror: an Indian debate on experience and theory. Oxford: Oxford University Press; 2012.
7. Jodhka SS. Caste in contemporary India. London: Routledge; 2015.
8. भारत सरकार, सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय। अनुसूचित जाति विद्यार्थियों के लिए छात्रवृत्ति एवं उच्च शिक्षा संबंधी योजनाएँ।
9. Thorat S, Newman KS, editors. Blocked by caste: economic discrimination in modern India. Oxford: Oxford University Press; 2010.
10. भारत सरकार। भारत का संविधान, अनुच्छेद 330 एवं 332।
11. भारत सरकार। संविधान (तिहत्तरवाँ संशोधन) अधिनियम, 1992 तथा संविधान (चौहत्तरवाँ संशोधन) अधिनियम, 1992।
12. भारत सरकार, सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय। प्रधानमंत्री अनुसूचित जाति अभ्युदय योजना (PM&AJAY): योजना दिशानिर्देश।
13. भारत सरकार। भारत का संविधान, अनुच्छेद 14, 15, 16, 17 एवं 46।
14. Galanter M. Competing equalities: law and the backward classes in India. Berkeley: University of California Press; 1984.
15. भारत सरकार। नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम, 1955 तथा अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989।
16. भारत सरकार। भारत का संविधान, अनुच्छेद 338।
17. Thorat S, Umakant, editors. Caste, discrimination and exclusion in modern India. New Delhi: Sage Publications; 2004.